

भारत में चित्रपट का उद्भव एवं प्रारम्भिक विकास

Komal Vashistha^{1*} Dr. Kiran Hooda²

¹ Research Scholar, OPJS University, Churu, Rajasthan

² Assistant Professor, OPJS University, Churu, Rajasthan

सार – भारत में चित्रपट का उद्भव एवं विकास किस प्रकार हुआ यह जानने से पूर्व यह जानना भी अति आवश्यक है कि चित्रपट का जन्म कहां और भारत में इसका आगमन कैसे हुआ?

-----X-----

आज से लगभग चार सौ सत्तर वर्ष पूर्व पूर्वी-जर्मनी का एक युवा गणितज्ञ, गणित के किसी प्रश्न को हल कर रहा था। वह कुर्सी पर बैठा था। उसके सामने मेज पर एक लैम्प जल रहा था। सोचते-सोचते उसकी दृष्टि दीवार पर पड़ी। उसे वहां अपनी टोपी की छाया दिखाई दी। उस छाया को देखकर उसे घुड़सवार मनुष्य का आभास हुआ। यह देखकर वह बड़ा अचंभित और रोमांचित हुआ। जब उसने तेजी से अपना सिर हिलाया तो ऐसा प्रतीत हुआ कि घुड़सवार भी तेजी से दौड़ रहा है। बस यहीं से चित्रपट बनाने के विचार ने जन्म लिया। इस गणितज्ञ का नाम था एथनासियस किर्चर। सन् 1645 में उसने एक लालटेन बनाई, जिसे उसने जादुई-लालटेन नाम दिया। वह रेखांकित चित्रों को इस लालटेन के सम्मुख रखता और उसकी छाया दीवार पर दिखाता। चित्रपट का यही प्रथम प्रदर्शन था।[1]

बच्चन श्रीवास्तव ने सिनेमा के अविष्कार की कहानी बताते हुए 'जैट्राप' एक नामक यन्त्र का उल्लेख किया है, जिसका निर्माण 1835 के लगभग हुआ था। यह एक ऐसा यन्त्र था जिसमें बहुत से चित्र, एक चर्खी में आसपास चिपका दिये जाते थे। इसमें एक अन्य चर्खी भी लगी रहती थी। जब जैट्राप की पहली चर्खी को घुमाया जाता, तब दर्शक को चित्रों में गति होने का आभास होता था।[2] सम्भवतः इसी से प्रेरित होकर ऐसा यंत्र बनाने के प्रयास चलते रहे जिससे लोग पर्दे पर चलती-फिरती और यहां तक कि बोलती हुई तस्वीरें देख सकें। इसी प्रयास के फलस्वरूप अमेरिका में बसे वैज्ञानिक 'टॉमस एल्वा एडीसन' ने 1870 में एक बक्सानुमा यन्त्र बनाया, जिसमें एक ओर लेंस तथा दूसरी ओर चित्रों को रखकर सूर्य की रोशनी में उन चित्रों को गतिशील रूप में देखना सम्भव हो सका। इस यन्त्र का नाम 'एडीसन बॉक्स' रखा गया।[3]

इसके पश्चात् 1877 में सेन फ्रांसिसको के एक अंग्रेज फोटोग्राफर इडविगर्ड माईब्रिज ने एक प्रयोग किया। उसने एक पंक्ति में पच्चीस कैमरे लगाकर, एक भागते हुए घोड़े के चित्र उतारे। इस प्रयोग के लिए माईब्रिज ने सभी कैमरों के शटर एक धागे से इस प्रकार बांधे कि जब घोड़ा उन कैमरों के सामने से दौड़ा, तब एक के बाद एक धागा टूटता गया तथा शटर खुलकर बन्द होते गए। जब उन सभी चित्रों को एक साथ रख कर देखा गया तो ऐसा आभास हुआ कि घोड़ा दौड़ रहा है।[4] चित्रपट की गति तथा कैमरे की दिशा में यह अद्भुत उपलब्धि थी। वस्तुतः इस अविष्कार ने चित्रपट के तकनीकी विकास में अमूल्य योगदान दिया।

माईब्रिज के पश्चात् चित्रपट के क्षेत्र में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अविष्कार 'टॉमस एल्वा एडीसन' का है। एडीसन ने सर्वप्रथम 'फोटोग्राफ', 'इलैक्ट्रिक बल्ब' और 'एडीसन बॉक्स' का अविष्कार किया था। इस प्रकार उसने आगामी अविष्कारों के लिए एक पृष्ठभूमि तैयार की। अपने नए प्रयोगों को जारी रखते हुए उसने 6 अक्टूबर 1880 को अमेरिका के न्यूजर्सी नगर के वैस्ट ओरेन्ज क्षेत्र में स्थित, अपनी प्रयोगशाला में 'किनेटोस्कोप' नामक यन्त्र का सफल एवं ऐतिहासिक प्रदर्शन किया।[5] इस अविष्कार के लिए अलग-अलग प्लेटों पर चित्र लिए जाते थे, फिर उन्हें घुमाया जाता था। इसमें एक समस्या यह थी कि एक तो इन्हें निर्मित करने में बहुत समय लगता था और दूसरे इन प्लेटों के टूटने का डर भी बना रहता था। वर्ष 1887 में इंजीनियर जार्ज ईस्टमैन ने सेल्यूलाइड फिल्म का अविष्कार करके इस दोष का निवारण किया। एडिसन के 'किनेटोस्कोप' ने संयुक्त राज्य अमेरिका और फ्रांस के लोगों को चित्रपट के प्रति उत्सुक कर दिया। एडीसन ने इससे 23 अप्रैल, 1896 को न्यूयॉर्क में 6 मिनट की एक फिल्म का

प्रदर्शन भी किया किन्तु इसमें एक बार में एक ही व्यक्ति उस फिल्म को देख सकता था। वर्ष 1903 न्यूयार्क में ही एक ऐसी फिल्म दिखाई गई थी जिसमें गतिहीन चित्र इस प्रकार जमाए गए थे कि गतिमान होने पर वे एक कहानी बताते थे। इसका नाम 'द ग्रेट ट्रेन रॉबरी' रखा गया।[6] वर्ष 1895 में वाशिंगटन के थामस ऐरमट ने आधुनिक प्रोजेक्टर की विशेषताओं को खोज कर एक मशीन बनाई।[7] परन्तु इसमें उन्होंने एडीसन के किनेटोस्कोप चित्रों का सफल प्रदर्शन किया। इसका नाम वीटास्कोप रखा गया।

किन्तु फ्रांस ही वह प्रथम देश और फ्रांसीसी ही वे खुशनसीब लोग थे जिन्हें दुनिया में सर्वप्रथम चित्रपट (सिनेमा) देखने का अवसर मिला। 18 दिसम्बर सन् 1895 ई. को पेरिस नगर स्थित ग्रांड कैफे के बेसमेंट में इसका प्रथम प्रदर्शन हुआ। यहां लुइस जीन एवं आगस्ट मैरी उर्फ ल्युमिएर ब्रदर्स ने कौतूहल से भरे दर्शकों को लगभग एक मिनट तक चित्रपट के टुकड़े दिखाए। यही चित्रपट का सर्वप्रथम सार्वजनिक प्रदर्शन था। ल्युमिएर बन्धुओं ने एक वर्ष के भीतर ही इसे दुनिया के सभी महत्त्वपूर्ण देशों तक पहुंचा दिया। उनका बनाया हुआ 'सिनेमैटोग्राफ' भी एडीसन की मशीन पर आधारित था।[8] दस वर्षों में चित्रपट ने इतनी उन्नति कर ली कि लोगों ने इसे 'आश्चर्यजनक' अजूबा मानना बन्द कर दिया। कुछ बुद्धिजीवी और प्रतिभावान लोग इसकी व्यवसायिक सम्भावनाओं के विषय में गहन चिन्तन करने लगे। आरम्भ में फ्रांस का जो स्थान इस क्षेत्र में बना था वह अमेरिका ने ले लिया और सन् 1914 में चित्रपट निर्माण के क्षेत्र में अमेरिका का स्थान महत्त्वपूर्ण हो गया।[9]

भारत में चित्रपट पहुंचने में केवल छः माह लगे। समन्दर पार से ल्युमिएर बन्धुओं के प्रतिनिधि इस अजूबे को लेकर, घुमन्तु बाइस्कोप के रूप में बम्बई आए। भारत भूमि पर 7 जुलाई सन् 1896 को काला घोड़ा के निकट स्थित 'वॉटसन होटल' में उन्होंने लगभग 200 दर्शकों के सामने अपने उपकरणों द्वारा प्रथम बार छः चलती-फिरती तस्वीरों में, रेल का आगमन, समुद्र में स्नान, फैक्ट्री में छुट्टी, इमारत का गिराना, सिनेमैटोग्राफ का आगमन सैनिक और स्त्रियां आदि विभिन्न प्रसंगों के दृश्य दिखाए।[10] इनमें कथानक की कोई क्रमबद्धता नहीं थी और टिकट था दो रुपये प्रति व्यक्ति। इसके एक सप्ताह पश्चात् 14 जुलाई 1896 से यह प्रदर्शन बम्बई के नॉवेल्टी थियेटर में प्रारंभ हो गया। इस दिन यहां 24 लघु चित्रपट दिखाए गए।[11] दर्शकों की भीड़ चलती-फिरती तस्वीरों को देखकर आश्चर्यचकित थी। तत्पश्चात् प्रोफेसर स्टीवनसन ने कलकत्ता के स्टार थियेटर में इसका प्रदर्शन किया। एक भारतीय फोटोग्राफर हीरालाल सेन ने इस प्रदर्शन पर 1899 में एक फिल्म बनाई जिसका नाम था 'फ्लावर ऑफ एशिया'।

किन्तु किसी भारतीय द्वारा प्रथम बार चित्रपट बनाए जाने का श्रेय भारत के हरिश्चन्द्र सखाराम उर्फ सावे दादा को जाता है। उन्होंने भारत में भी चित्रपट बनाने का विचार किया। वे एक फोटोग्राफर एवं फोटोग्राफी उपकरणों के विक्रेता थे। वे सर्वप्रथम भारतीय थे जिन्होंने इक्कीस गिन्नी की कीमत पर लंदन से एक सिने कैमरा आयात किया। सन् 1899 में उन्होंने बम्बई के हेंगिंग गार्डन में दो प्रसिद्ध पहलवानों की कुशितयां आयोजित कर अपने कैमरे में शूट किया और प्रोसेसिंग के लिए इंगलैण्ड भेजा। इंगलैण्ड से प्रोसेस होकर जब यह फिल्म भारत आई तो सावे दादा ने उसका प्रदर्शन पैरी थियेटर में किया। यह प्रयोग बड़ा सफल और उत्साहवर्धक रहा। बाद में सावे दादा ने बंदरों के प्रशिक्षण पर एक और फिल्म बनाई इस फिल्म को भी बहुत सराहा गया। अपने इस सिने कैमरे से उन्होंने आगामी कुछ वर्षों तक अनेक प्रसंगों पर छोटी-छोटी फिल्में बनाई जिनमें कैब्रिज से लौटे 'डॉ. आर.पी. परांजपे की वापसी' और 'दिल्ली दरबार' को बड़ी ख्याति मिली। वर्ष 1899 के समाचार-पत्रों में इन फिल्मों के विज्ञापन छपे।[12]

वॉटसन होटल में चार साल के अनन्दर चित्रपट ने काफी लोकप्रियता प्राप्त कर ली थी। एक शो में पच्चीस छोटे-छोटे चित्र दिखाए जाने लगे थे। साथ में यूरोपीय महिलाओं का पियानों और वायलिन वादन का कार्यक्रम भी होता था। जिन्हें 'जिन्दा तिलिस्म', 'आदम कदम साथ', 'दिलकश', 'झिलमिलाहट से मुक्त' आदि शीर्षकों से सम्बोधित किया जाता था।[13] उन्हीं दिनों बम्बई के नॉवेल्टी थियेटर में नियमित रूप से दो शो होते थे, एक शाम साढ़े छः बजे दूसरा रात को साढ़े नौ बजे। प्रत्येक शो में लगभग बारह चित्रपट दिखाये जाते थे।[14]

1900 में एक और भारतीय ने चित्रपट निर्माण में कदम रखा। इसका नाम एफ.बी. थानावाला था। उधर बंगाल के हीरालाल सेन ने 'रायल बाइस्कोप' खोला और कलकत्ता के क्लासिक थियेटर में लोकप्रिय नाटकों के दिखाए जाने के पश्चात् प्रत्येक के अन्त में वह, उसी नाटक के दृश्यों के चित्रपट दिखाने लगे। यह चित्रपट प्रदर्शन में नयापन लाने का प्रयत्न था। 1903 में हीरालाल अपने स्वयं के चित्रपटों का पूरा शो देने लगे जिनके नाम भारतीय इतिहास की घटनाएं 'पौराणिक हिन्दू गाथाओं के दृश्य', 'घरेलू जीवन की झांकियां', 'हमारे रंगमंच के कुछ पुष्प' आदि थे।[15]

1904 में घूम-घूम कर चित्रपट का प्रदर्शन करने वाले डॉ. सेठना का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। डॉ. सेठना के एक चित्रपट 'द लाइफ ऑफ क्राइस्ट' को देखकर ही भारतीय चित्रपट के जन्मदाता 'धुइराज गोविन्द फाल्के' को चित्रपट बनाने की प्रेरणा मिली।[16] 14 अप्रैल 1911 को फाल्के अपने

बड़े पुत्र बालचन्द्र के साथ अमेरिका-इण्डिया पिक्चर पैलेस[17] में एक फिल्म 'एमेजिंग एनिमल्स' देखने के लिए गिरगांव (मुम्बई) गये।[18] अगले ही दिन इस्टर के दिन वे अपने परिवार के साथ 'दी लाईफ ऑफ जीसस' देखने गये। यहीं पर्दे पर जीसस को देखकर उनके मन में हिन्दू देवता राम और कृष्ण को देखने का विचार आया। उन्होंने तुरन्त चित्रपट निर्माण का व्यवसाय करने और चित्रपट निर्माण के लिए आवश्यक तकनीकी जानकारी के लिए लंदन जाने का निर्णय किया।[19] किन्तु उनकी इस यात्रा के लिए आवश्यक राशि एकत्रित नहीं हो सकी। यशवंतराव नाडकर्णी तथा अब्बा साहब चिटनिस ने उनकी 12 हजार रुपये की बीमा पॉलिसी रहन रख कर दस हजार रुपये दिए। एक फरवरी, 1912 को वे समुद्र के रास्ते लंदन गए।[20] वहां उन्होंने चित्रपट निर्माण सामग्री खरीदी। वे दो सप्ताह लंदन में रहे और एक अप्रैल 1912 को मुम्बई वापिस आए।[21] उसी दिन उन्होंने फाल्के फिल्म कंपनी की स्थापना की। उनकी चित्रपट निर्माण सामग्री मई 1912 में मुम्बई पहुंची। उन्होंने कथानक 'हरिश्चन्द्र' पर चित्रपट के निर्माण का निर्णय किया और उसकी पटकथा भी स्वयं लिखी।[22] 6 माह 27 दिन में 3700 फीट (1100 मीटर) लगभग चार रील में यह चित्रपट बनकर तैयार हुआ।[23] 21 अप्रैल 1913 (शनिवार) के दिन बम्बई के ओलंपिया थिएटर में इसका विशेष प्रिमियर हुआ जिसमें उद्योगपति, व्यवसायी, वकील तथा जज आदि प्रतिष्ठित लोग उपस्थित थे।[24] 3 मई, 1913 को इसका विधिवत प्रदर्शन कोरोनेशन सिनेमा, गिरगांव (मुम्बई) में आरंभ हुआ। यह एक व्यवसायिक सफलता थी जिसने भारत में फिल्म उद्योग की आधारशिला रखी। यद्यपि दादा साहब तोरणे उर्फ रामचन्द्र गोपाल ने 18 मई, 1912 में मुम्बई के कोरोनेशन सिनेमैटोग्राफ, गिरगांव में प्रथम मराठी मूक फिल्म 'श्री पुण्डलिक' प्रदर्शित की। किन्तु प्रथम पूरा चित्रपट बनाने का श्रेय दादा साहब फाल्के को जाता है। इस प्रकार दादा साहब फाल्के की इस क्रान्ति ने युग परिवर्तन कर दिया और आविष्कारों की विकसित होती हुई परम्परा के अन्तर्गत भारत का प्रथम चित्रपट 'राजा हरिश्चन्द्र' हमारे सम्मुख आया और यहीं से भारतीय चित्रपट का परिदृश्य उत्तरोत्तर बदलता गया।[25]

भारतीय हिन्दी चित्रपट के इतिहास को हम मुख्यतः दो भागों में बांट सकते हैं। प्रथम भाग में उन चित्रपटों को लिया जा सकता है, जो मूक थे, जिसमें ध्वनि वार्तालाप आदि की कोई व्यवस्था नहीं थी। द्वितीय भाग में सवाक् चित्रपटों को लिया जा सकता है। इन चित्रपटों में तकनीकी विज्ञान की सहायता से ध्वनि संप्रेषित की गई थी। गीत-संगीत एवं संवाद आदि का प्रचलन इन्हीं साधनों के माध्यम से हुआ। इन्हें भारतीय चित्रपट अथवा हिन्दी चित्रपट के दो युग भी कहा जा सकता है:- 1. मूक चित्रपट का युग -

1913 से 1934 तक तथा 2. सवाक् चित्रपट का युग - 1934 से आज तक।

प्रामाणिक तथ्यों के आधार भारत में चित्रपट निर्माण का श्रीगणेश पर स्व. श्री दुंदीराज गोविन्द फाल्के (1870-1941) के स्वनिर्मित प्रथम पौराणिक चित्रपट 'राजा हरिश्चन्द्र' से हुआ। 'राजा हरिश्चन्द्र' को प्रथम हिन्दी चित्रपट माना गया है, क्योंकि इसके शीर्षक को दर्शाने के लिये हिन्दी भाषा का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार मराठी भाषी होते हुए भी दादा साहब ने महात्मा गांधी की भांति ही हिन्दी भाषा के राष्ट्रव्यापी स्वरूप को पहचान लिया था और उसी को उन्होंने अपने इस प्रथम चित्रपट को समझाने का माध्यम स्वीकार किया। दादा साहब जानते थे कि वह जिस नई विधा का सूत्रपात करने जा रहे हैं, उसका एक ऐतिहासिक महत्त्व है। 'राजा हरिश्चन्द्र' (1913) को ही भारत का प्रथम हिन्दी चित्रपट स्वीकार किया गया है।[26] 'राजा हरिश्चन्द्र' बनाने के पश्चात् दादा साहब फाल्के नासिक लौट आए। यहां उन्होंने 'हिन्दुस्तान फिल्म कम्पनी' की स्थापना की। सन् 1917 में चित्रपट बनाने के लिये कुछ नये हिस्सेदार उनके साथ आए, जिनमें मायाशंकर, कूलशंकर भट्ट आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। वर्ष 1917 तक दादा साहब फाल्के अकेले फिल्म निर्माता थे, जिन्होंने 23 से भी अधिक मूक चित्रपटों का निर्माण किया। इनमें से कुछ हैं- 'सत्यवान-सावित्री', 'भस्मासुरमोहिनी', 'लंकादहन' तथा 'कालियामर्दन', 'कृष्ण जन्म' आदि हैं। दादा साहब ने 1917 ई. तक अपने चित्रपटों के विषय पौराणिक कथा एवं साहित्य आदि को ही चुना, क्योंकि हर व्यक्ति इन चित्रपटों के चरित्रों को सरलता से पहचान सकता था। सन् 1913 से 1930 तक बने कुछ मूक चित्रपटों का विवरण इस प्रकार है:-

1913 - राजा हरिश्चन्द्र

1914 - भस्मासुर-मोहिनी, सत्यवान सावित्री।

1917 - सत्यावादी राजा हरिश्चन्द्र एवं लंका दहन आदि।

1918 - श्रीकृष्ण जन्म

1919 - कालिया-मर्दन

1920 - इस वर्ष लगभग 22 चित्रपट प्रदर्शित हुए। इनमें बालिका वधु, दक्ष यज्ञ, जालंधर वध, कंस वध, कटोरा भर खून, कृष्ण सुदामा, लव कुश, महाभारत, मृच्छकटिक, नृसिंह अवतार, नरसिंह मेहता, रामजन्म, राम और माया, सैरान्धि,

शकुन्तला, श्रीकृष्ण लीला, सीता स्वयंवर, श्री राम जन्म, विचित्र गुटिका, विक्रम उर्वशी आदि।

1921 - इस वर्ष लगभग 38 चित्रपट बने जिनमें प्रमुख हैं—भक्त विदूर, ध्रुव चरित्र, राजा गोपीचन्द्र, गौवर्धनधारी, जगत जननी जगदंबा, मीरा बाई, भीष्म प्रतिज्ञा, महासती अनुसूया, नलदमयन्ती, सुरेखा हरण आदि।

1922 - इस वर्ष लगभग 59 चित्रपट बने जिनमें प्रमुख हैं - अशोक, गंगा अवतार, द्रौपदी स्वयंवर, लैला-मजनू, पति भक्ति, सुकन्या सावित्री, भीष्म, बाणशैया, भीष्म प्रतिज्ञा, हरी तालिका, कालिदास, वीर अभिमन्यु आदि।

1923 - इस वर्ष लगभग 46 चित्रपट बने जिनमें प्रमुख हैं—नूरजहां, पत्नी प्रताप, सावित्री सिहांगद, बबरूवाहन, भक्त सुदामा, गुरु द्रोणाचार्य, जनक विदेही, जरासंध वध, किराट वध, लाइफ ऑफ लॉर्ड बुद्धा, मातृ स्नेह आदि।

1924 - इस वर्ष लगभग 68 मूक चित्रपट बने जिसमें प्रमुख हैं—अश्वत्थामा, आत्मबल, भक्त सुदामा, चन्द्रगुप्त और महात्मा चाणक्य, सती अनुसूया, ध्रुव चरित्र, गौ माता, पृथ्वी वल्लभ, पृथ्वीराज चौहान, रजिया बेगम, वीर दुर्गादास, जयद्रथ वध, काला नाग, नवीन भारत, शैतान पुजारी आदि।

1925 - इस वर्ष लगभग 80 चित्रपट बने जिनमें प्रमुख हैं—अनंत व्रत, बाजीराव मसतानी, काला चोर, चन्द्रकान्त, देवी अहिल्याबाई, छत्रपति संबाजी, इन्द्रसभा, देवदासी, जल कुमारी, जस्टिस, कुलीनकान्ता, माया बाजार आदि।

1926 - इस वर्ष लगभग 87 चित्रपट बने जिनमें प्रमुख हैं—अबला रानी, बालाजी निम्बालकर, भगवां झण्डा, पृथ्वी पुत्र, दिल्ली का ठग, धर्म पत्नी, गज गौरी, स्वर्ण कमल, पागल प्रेमी, आशा, अजब कुमारी, दुलारी आदि।

1927 - इस वर्ष लगभग 93 चित्रपट बने जिनमें प्रमुख हैं—अद्भुत खून, अल्लाह का प्यारा, असुरी लालसा, बलिदान, भीम संजीवन, दक्ष यक्ष, दशावतार, द्रौपदी वस्त्रहरण, गंधर्व कन्या, हनुमान जन्म, चंडीदास, दुर्गेशनंदिनी आदि।

1928 - इस वर्ष लगभग 111 चित्रपट बने जिनमें प्रमुख हैं—आंख का नशा, भस्मासुर, चमकती चंदा, चन्द्रहास, देवकन्या, देवदास, द्रौपदी वस्त्रहरण, सम्राट अशोक, घोर प्रतिज्ञा, गुलबदन, हीर रांझा, जय भवानी, कनक कान्ता आदि।

1929 - इस वर्ष 143 चित्रपटों का निर्माण हुआ जिनमें प्रमुख हैं—अकलमंद बेवकूफ, अनारबाला, अपहृता, भंगबाला, भूलभुलैया,

भिखारन, चंद्रहास, दशरथी राम, ज्ञान सुन्दरी, गोपाल कृष्ण, हातिमताई, हीर रांझा आदि।

1930 - इस वर्ष लगभग 110 चित्रपट बने जिनमें प्रमुख हैं—अरुणोदय, तलवार का पानी, वीर भूषण, खूनी ताज, अमर कीर्ति, आदर्श रामानी, अघोर लालसा, चतुर सुन्दरी, सिनेमा गर्ल, देवदासी, धूमकेतु, खूनी तीर आदि।

इस प्रकार बहुत से मूक चित्रपटों का निर्माण हुआ।[27] इस बीच बने चित्रपटों के विवेचन से ज्ञात होता है कि अधिकांश चित्रपट धार्मिक विषयों पर बने थे, जिनमें हिन्दू पौराणिक ग्रन्थों पर अधिक बल दिया गया। बाद में धीरे-धीरे यह परम्परा बदली और पौराणिक कथाओं के साथ-साथ समाज के अन्य विषयों पर भी चित्रपटों का निर्माण होने लगा।

प्रथम भारतीय सवाक् हिन्दी चित्रपट 'आलमआरा' को माना जाता है। इसके संवाद एवं गीत आदि हिन्दुस्तानी भाषा में थे। इसे 1931 में श्री आर्देशिर ईरानी की चित्रपट निर्माण संस्था 'इंपीरियल फिल्म कम्पनी' ने बनाया था। इस चित्रपट का प्रदर्शन 14 मार्च, 1931 को 'मैजैस्टिक सिनेमा', मुम्बई में किया गया।[28] इस चित्रपट के निर्माण में सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि इसके निर्माण, सम्पादन एवं तकनीकी पक्ष में किसी तकनीशियन की सहायता नहीं ली गई थी। चालीस हजार रुपये की लागत से बने इस चित्रपट की लम्बाई 10,500 फुट थी। उस समय के प्रसिद्ध कलाकार मास्टर विठ्ठल और जुबैद ने इस चित्रपट में अभिनय किया।[29] इस प्रथम सवाक् चित्रपट की भाषा के विषय में स्वयं निर्माता ईरानी ने उस समय दिये गये अपने भाषण में स्पष्टीकरण देते हुए कहा था कि आलमआरा की भाषा न खास उर्दू है और न खास हिन्दी है अर्थात् दोनों मिली-जुली भाषा है।[30] जैसे-जैसे सवाक् चित्रपटों का जादू लोगों पर चलता गया, मूक चित्रपटों का आकर्षण घटता गया। इसके फलस्वरूप 1931 ई. में जहां 207 मूक चित्रपट बने, 1932 में उनकी संख्या घटकर 88 रह गई। 1933 में 39 मूक चित्रपट बने और 1934 में ये केवल सात रह गये। इस प्रकार महान् मूक युग की विदाई हुई और भारतीय चित्रपट ने एक नये युग में प्रवेश किया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- 1 कुमार राकेश, कहानी सिनेमा के जन्म की, नवभारत टाइम्स, 14 अक्टूबर, 1984
- 2 बच्चन श्रीवास्तव, भारतीय फिल्मों की कहानी, पृ. 15

- | | | | |
|----|--|----|---|
| 3 | उमा गर्ग, संगीत का सौंदर्य बोध, पृ. 2 | 23 | वही, पृ. 43 |
| 4 | हरीश कुमार, सिनेमा और साहित्य, पृ. 52 | 24 | फिरोज रंगूनवाला, पूर्वोक्त, पृ. 10 |
| 5 | बच्चन श्रीवास्तव, पूर्वोक्त, पृ. 15 | 25 | डॉ. विमल, पूर्वोक्त, पृ. 7 |
| 6 | फिरोज रंगूनवाला, भारतीय चित्रपट का इतिहा, 1975, पृ. 12 | 26 | फिल्म फेयर पत्रिका, 22 मार्च, 1963, पृ. 19 |
| 7 | मोशन पिक्चर्स, एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका, खण्ड-15, पृ. 856 | 27 | हरीश कुमार, सिनेमा और साहित्य, पृ. 57 |
| 8 | महेन्द्र मिश्र, भारतीय चित्रपट, पृ. 29 | 28 | बच्चन श्रीवास्तव, भारतीय फिल्मों की कहानी, पृ. 40 |
| 9 | फिरोज रंगूनवाला, पूर्वोक्त, पृ. 12 | 29 | फिल्म फेयर पत्रिका, 8 मार्च, 1963, पृ. 31 |
| 10 | वही, पृ. 12 | 30 | एस.टी.एस. रामचन्द्रन, सेवन्टी इयर्स ऑफ इण्डियन सिनेमा, 1913-1983, पृ. 365 |
| 11 | एरिक वार्नो एवं एस. कृष्णस्वामी, इण्डियन फिल्म, 1980, पृ. 5 | | |
| 12 | फिल्म संगीत इतिहास अंक – जनवरी-फरवरी, 1998 | | |
| 13 | एरिक वार्नो एवं एस. कृष्णस्वामी, पूर्वोक्त, पृ. 6 | | |
| 14 | वही, पृ. 16 | | |
| 15 | उमा गर्ग, हिन्दी फिल्मों का संक्षिप्त इतिहास और संगीत, पृ. 3 | | |
| 16 | शरद् दत्त, कहाँ गये वो लोग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 19 जून, 1988, पृ. 13-14 | | |
| 17 | कौसाम्बी, मीरा, जैण्डर कल्चर एण्ड परफोरमेंस : मराठी थियेटर एण्ड सिनेमा बिफोर इण्डिपेंडेंस, टेलर एण्ड फ्रांसिस, 2014, पृ. 320 | | |
| 18 | वाटव बापू, दादा साहब फाल्के, दी फादर ऑफ इण्डियन सिनेमा, (अनु.) दिरकर, एस.ए. नेशनल बुक ट्रस्ट, 2004, पृ. 24-26 | | |
| 19 | वही | | |
| 20 | वही, पृ. 29 | | |
| 21 | वही, पृ. 32-33 | | |
| 22 | वही, पृ. 36 | | |

Corresponding Author

Komal Vashistha*

Research Scholar, OPJS University, Churu, Rajasthan